B.A. PART-1

1.

हिन्दी (प्रतिष्ठा) प्रथम पत्र

हिन्दी साहित्य का इतिहास

प्रश्न:- हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की परम्परा

हिन्दी भाषा एवं साहित्य का प्रारम्भ मोटे तौर पर 1000 ई० के आस-पास माना जाता है तथापि हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन का वास्तविक सूत्रपात 19 वीं शताब्दी से माना जाता है। यद्यपि मध्यकाल में रचित वार्ता साहित्य, यथा- चौरासी वैष्णवन् की वार्ता, दो सौ बावन वैष्णवन् की वार्ता, भक्तमाल आदि में अनेक कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय मिल जाता है, किन्तु इतिहास-लेखन के लिए जो कालक्रमानुसार वर्णन अपेक्षित होता है, उसका नितांत अभाव इन वार्ता-ग्रन्थों में है, अतः इन्हें साहित्य का इतिहास-ग्रंथ नहीं माना जा सकता है। हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों में जो उल्लेखनीय हैं, उनका संक्षिप्त विवरण निम्नवत है—

(1) गार्सा-द-तासी :-

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परम्परा का सूत्रपात भी किसी हिन्दी भाषी व्यक्ति द्वारा न होकर फ्रेंच विद्वान् 'गार्सा-द-तासी' द्वारा रचित 'इस्तवार द ला लितरेत्युर ऐन्दुई ऐन्दुस्तानी' नामक ग्रंथ से हुआ, जिसकी रचना दो भागों में की गई है। इसके प्रथम भाग का प्रकाशन सन् 1839 ई० में और द्वितीय भाग का प्रकाशन सन् 1847 ई० में हुआ। इस ग्रंथ में हिन्दी और उर्दू के अनेक कवियों का विवरण वर्णानुक्रम में प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि गार्सा-द-तासी के इस इतिहास-ग्रंथ में अनेक कमियाँ हैं, यथा- काल विभाजन का कोई प्रयास न करना, कवियों का कालक्रमानुसार वर्गीकरण न करना तथा युगीन परिस्थितियों का विवेचन न करना- तथापि इस ग्रंथ में पहली बार हिन्दी काव्य के इतिहास को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है, साथ ही

कवियों के रचनाकाल का निर्देश भी किया गया है। अतः इसे इतिहास-ग्रंथ कहने में किसी को संकोच नहीं है। अस्तु, अनेक न्यूनताओं के होने पर भी इस ग्रंथ को हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की परम्परा में प्रथम ग्रंथ होने का गौरव निःसंकोच दिया जा सकता है।

(2) शिवसिंह सेंगर :

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परम्परा में दूसरी महत्वपूर्ण कृति 'शिवसिंह सरोज' है, जिसकी रचना शिवसिंह सेंगर ने सन् 1883 ई० में की। इसमें लगभग एक हजार छोटे-बड़े कवियों का जीवन-चरित, उनकी साहित्यिक कृतियाँ एवं कवियों के उदाहरण दिए गए हैं। उन्होंने प्रायः सभी कवियों का रचनाकाल एवं जन्मकाल भी दिया है। इतिहास लेखन के लिए जिस तटस्थता, पर्यवेक्षण एवं वर्गीकरण की क्षमता की अपेक्षा की जाती है उसका नितांत अभाव इस ग्रंथकार में दिखाई पड़ता है। अनेक त्रुटियों से युक्त होने पर भी शिवसिंह सरोज में तत्कालीन समय तक उपलब्ध हिन्दी कविता सम्बन्धी जानकारी को एक स्थान पर एकत्रित करने का सराहनीय प्रयास किया गया है। परवर्ती इतिहासकारों ने इस ग्रंथ में दी गई सामग्री का उपयोग करते हुए अपने इतिहास-ग्रंथों की रचना की है, इस प्रकार इस विशाल-ग्रंथ की उपादेयता आज भी है।

(3) सर जार्ज ग्रियर्सन :

सर जार्ज ग्रियर्सन ने 1888 ई० में 'द माडर्न वर्नेक्यूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान' नामक ग्रंथ का प्रकाशन एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल की पत्रिका के विशेषांक के रूप में करवाया। अनेक विद्वानों ने जिनमें डा०

3.

किशोरीलाल गुप्त प्रमुख हैं, इस ग्रंथ को ही सही अर्थों में हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास माना है। इस इतिहास-ग्रंथ में पहली बार कवियों और लेखकों को कालक्रम से वर्गीकृत किया गया है साथ ही उनकी प्रवृत्तियों पर भी प्रकाश डाला गया है।

ग्रियर्सन ने एक सुस्पष्ट भाषा-नीति का आधार ग्रहन करते हुए इस ग्रंथ में केवल हिन्दी कवियों को स्थान दिया। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश कवियों को उन्होंने हिन्दी की परिधि से निकाल दिया, साथ ही अरबी-फारसी एवं उर्दू के कवियों को भी उन्होंने हिन्दी कवियों में नहीं गिना। उनका योगदान इस बात में है कि उन्होंने परवर्ती इतिहासकारों के लिए हिन्दी कवियों को चुनने का मार्ग प्रशस्त कर दिया। हिन्दी कवियों में किसे स्थान मिलना चाहिए और किसे नहीं, यह एक ऐसा जटिल प्रश्न था जिसकी भूलभुलैया में साहित्य के इतिहास-लेखक प्रायः उलझ जाते थे।

ग्रियर्सन ने अपने इस इतिहास-ग्रंथ में शिवसिंह सेंगर, गार्सा-द-तासी के द्वारा एकत्र की गई सामग्री का उपयोग करते हुए वार्ता-साहित्य से भी संदर्भ लिए हैं और यथास्थान उनकी सूचना देकर ग्रंथ को और भी अधिक प्रामाणिक बनाने का प्रयास किया है। ग्रियर्सन का यह ग्रंथ अँग्रेजी भाषा में लिखा गया था तथा इसे उन्होंने 11 (ग्यारह) विभिन्न अध्यायों में विभक्त किया है। प्रत्येक अध्याय एक काल-विशेष का सूचक है, उन्होंने युगीन प्रवृत्तियों एवं परिस्थितियों का विवेचन भी इस इतिहास-ग्रंथ में किया है, ग्रियर्सन ने ही सबसे पहले अपने इस इतिहास में भक्तिकाल को हिन्दी

4.

साहित्य की महत्वपूर्ण उपलब्धि बताते हुए इसे हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग माना। उनके ग्रंथ का महत्व इसलिए भी है कि इसकी रचना उस काल में हुई थी जब हिन्दी साहित्य की इधर-उधर बिखरी हुई सामग्री का अध्ययन-अनुशीलन नहीं हुआ था और न ही हिन्दी अनुसंधान एवं आलोचना का पूर्ण विकास हो सका था, जो किसी भी इतिहास-लेखक के लिए कच्ची सामग्री जुटाने का काम करता है,

(5) मिश्र बन्धु :

हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में मिश्र बंधुओं द्वारा रचित 'मिश्रबंधु विनोद' का महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी रचना चार भागों में की गई है जिनमें से प्रथम तीन भाग सन् 1913 ई० में प्रकाशित हुए तथा चौथा भाग सन् 1914 ई० में। मिश्रबंधु विनोद तथा विशालकाय ग्रंथ है जिसमें लगभग 5000 कवियों के सम्बन्ध में विवरण दिया गया है। इस इतिहास ग्रन्थ में पहली बार काल-विभाजन का समुचित प्रयास किया गया है। उन्होंने सारे रचनाकाल को 8 कालखण्डों में विभक्त किया तथा विभिन्न काल-खण्डों के कवियों का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत करते हुए उनके साहित्यिक महत्व को उजागर किया। उन्होंने तुलनात्मक पद्धति का अनुसरण करते हुए कवियों की श्रेणियाँ बनाने का प्रयास भी किया है, परवर्ती इतिहास-लेखकों ने 'मिश्रबंधु विनोद' से कच्ची सामग्री लेकर अपने ग्रंथों के लिए सामग्री जुटायी है स्वयं आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने ~~अपनी~~ अपने हिन्दी साहित्य का इतिहास में यह स्वीकार किया है।

5.

(5) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल :

हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों में पं० रामचन्द्र शुक्ल जी का नाम सर्वोपरि है। उन्होंने सन् 1929 ई० में 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' नामक ग्रंथ हिन्दी शब्द सागर की भूमिका के रूप में लिखा, जिसे बाद में स्वतंत्र पुस्तक का रूप दिया गया। आचार्य शुक्ल ने साहित्य के इतिहास के प्रति एक निश्चित एवं सुस्पष्ट दृष्टिकोण का परिचय देते हुए यह सिद्धान्त स्थापित किया कि, "प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है। तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चलता है। आदि से अन्त तक इन्हीं चित्तवृत्तियों को परखते हुए साहित्य परम्परा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही 'साहित्य का इतिहास' कहलाता है।

शुक्ल जी का दूसरा महत्वपूर्ण योगदान काल-विभाजन के सम्बन्ध में है। मिश्रबंधुओं तथा ग्रियर्सन ने यद्यपि इस प्रकार के प्रयास किये थे, परन्तु वे प्रयास अधिक सफल नहीं हुए। शुक्ल जी ने मिश्रबंधुओं के काल-विभाजन पर टिप्पणी करते हुए लिखा है — "सारे रचनाकाल को केवल आदि, मध्य, पूर्व, उत्तर इत्यादि खण्डों में आँख मूँदकर बाँट देना- यह भी न देखना कि किस खण्ड के भीतर क्या आता है, क्या नहीं- किसी वृत्त संग्रह को इतिहास नहीं बना सकता।" इन्होंने हिन्दी साहित्य के 900 वर्षों के इतिहास को चार कालों में विभक्त कर नया नामकरण भी किया है।

1. आदिकाल (वीरगाथा काल) संवत 1050-1375 वि०)
2. पूर्व मध्यकाल (भक्ति काल, संवत 1375-1700 वि०)
3. उत्तर मध्यकाल (रीति काल, संवत 1700-1900 वि०)
4. आधुनिक काल (गद्य काल, संवत 1900-1984 वि०)

शुक्ल जी का यह काल-विभाजन अपनी सरलता एवं स्पष्टता के कारण अत्यंत लोकप्रिय हुआ और परवर्ती इतिहास लेखकों ने थोड़े-बहुत परिवर्तन से इसी को आधार बनाकर अपने काल-विभाजन एवं कालों के नामकरण प्रस्तुत किए। शुक्ल जी द्वारा दिए गए वीरगाथा काल का नाम पर सबसे अधिक आपत्ति की गई है, अन्यथा शेष कालों को ज्यों का त्यों परवर्ती इतिहासकारों ने प्रायः स्वीकार कर लिया है। आचार्य शुक्ल ने भक्तिकाल को निर्गुण एवं सगुण धाराओं में विभक्त कर पुनः उन्हें क्रमशः दो-दो उपविभागों- ज्ञानाश्रयी, प्रेमाश्रयी तथा रामभक्ति एवं कृष्णभक्ति शाखा में वर्गीकृत किया। रीतिकालीन कवियों के वर्गीकरण में भी उन्होंने अपनी प्रतिभा का परिचय देते हुए रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध एवं रीतिमुक्त कवियों को स्थान दिया। रीतिकालीन कवियों के आचार्यत्व पर भी उन्होंने सूक्ष्मता से विचार करते हुए अपने निष्कर्ष दिए हैं।

वस्तुतः शुक्लजी ने हिन्दी साहित्य के इतिहास की रचना करके एक मानदण्ड प्रस्तुत किया। उन्होंने जो प्रवृत्तिमूलक इतिहास प्रस्तुत किया, उसमें कवियों के जीवन परिचय को उतना महत्व नहीं दिया जितना उनकी रचनाओं के मूल्यांकन को, यही नहीं उन्होंने कवियों के साहित्यिक महत्व को पहचानने के उपरांत ही उन्हें इतिहास में स्थान दिया, इसलिए यह

संभव हो सका कि वे मिश्रबंधुओं के पाँच हजार कवियों की तुलना में केवल 1000 कवियों तक सीमित रह पाये।

(6) डॉ० रामकुमार वर्मा :-

डॉ० रामकुमार वर्मा हिन्दी जगत में एक नाटककार एवं एकांकीकार के रूप में अधिक प्रसिद्ध रहे। यद्यपि इन्होंने हिन्दी साहित्य के इतिहास को दो भागों में प्रकाशित करने की योजना को क्रियान्वित करने का भी प्रयास किया है। इनमें से एक भाग 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' सन् 1938 ई० में प्रकाशित हो चुका है जिसमें 693 ई० से 1693 ई० तक के कालखण्ड को विवेचित किया गया है। वर्मा जी के इतिहास-लेखन का प्रमुख आधार शुक्ल जी का इतिहास रहा है, जिसमें कहीं-कहीं थोड़ा बहुत मतान्तर भी है। उदाहरण के लिए शुक्ल जी के वीरगाथाकाल को वे चारणकाल कहना अधिक उपयुक्त मानते हैं तथा इससे पहले के साहित्य के लिए संधिकाल नाम देते हैं, वस्तुतः इन्होंने अपभ्रंश की बहुत सारी सामग्री को हिन्दी में समेट लिया है। इसलिए वे 'स्वयंभू' को हिन्दी का पहला कवि मानने की भूल कर गये हैं।

(7) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी :-

आचार्य शुक्ल के उपरांत यदि किसी अन्य विद्वान की मान्यताओं को हिन्दी जगत ने नतमस्तक होकर स्वीकार किया है, तो वे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ही हैं, जिन्होंने आदिकाल के सम्बन्ध में पर्याप्त कार्य किया है। अब तक साहित्य के इतिहास से संबंधित उनकी निम्नलिखित

8.

पुस्तकें प्रकाश में आयी हैं।—
(क) हिन्दी साहित्य की भूमिका
(ख) हिन्दी साहित्य! उद्भव और विकास
(ग) हिन्दी साहित्य का आदिकाल

आचार्य द्विवेदी द्वारा रचित हिन्दी साहित्य की भूमिका यद्यपि पद्धति की दृष्टि से इतिहास-ग्रंथ नहीं है, परन्तु उसमें दिए गए स्वतंत्र लेख हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन हेतु नयी सामग्री एवं नयी व्यवस्था प्रस्तुत करते हैं। वे आचार्य शुक्ल के कई निष्कर्षों से असहमत हैं। यथा- शुक्लजी ने जिस काल को वीरगाथा काल कहना उचित माना है, उसे आचार्य द्विवेदी आदिकाल कहना उचित मानते हैं। वीरगाथा काल का नामकरण शुक्ल जी ने जिन ग्रन्थों के आधार पर किया है, द्विवेदी जी ने उन ग्रन्थों की प्रामाणिकता पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। इसी प्रकार शुक्ल जी ने भक्ति आन्दोलन के उदय का प्रमुख कारण पराजित हिन्दू जाति की निराशा को माना है, वहीं द्विवेदी जी ने इसका खण्डन किया है। वे यह भी मानते हैं कि भक्ति का उदय इस्लाम के प्रभाव से नहीं हुआ।

आचार्य द्विवेदी ने अत्यन्त शोधपूर्ण मनन के उपरांत यह निष्कर्ष निकाला है कि हिन्दी संत काव्य पूर्ववर्ती नाथ, सिद्ध साहित्य का सहज विकसित स्वरूप है तथा हिन्दी सूफी काव्य की कथावस्तु, रूढ़ियाँ, रचना शैली, छंद योजना, ईरानी साहित्य से प्रभावित न होकर संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश की काव्य परम्पराओं पर आधृत हैं। उन्होंने कबीर की अवहेलना करने वाले आलोचकों को मुँहतोड़ जवाब दिया और उनकी काव्य प्रतिभा को उजागर करने का महत्वपूर्ण प्रयास किया। डॉ॰ गणपतिचन्द्र गुप्त ने

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के योगदान पर चर्चा करते हुए लिखा है - " वस्तुतः वे पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने आचार्य शुक्ल की अनेक धारणाओं और स्थापनाओं को चुनौती देते हुए उन्हें सबल प्रमाणों के आधार पर खण्डित किया। ... जहाँ तक ऐतिहासिक चेतना व पूर्व परम्परा के बोध की बात है, निश्चय ही आचार्य द्विवेदी हिन्दी के सबसे अधिक सशक्त इतिहासकार हैं।"

(8) हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास (सम्पादित) :-

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा सोलह खण्डों में हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास को प्रकाशित करने की योजना बनाई गई है। यह विशाल ग्रंथ किसी एक व्यक्ति की रचना न होकर शताधिक लेखकों के सामूहिक प्रयास का प्रतिफल है। इसका प्रत्येक खण्ड अलग-अलग विद्वानों के सम्पादन में तैयार किया गया है। अतः शैली की एकरूपता नहीं रह पायी है, यद्यपि इस ग्रंथ के लेखन हेतु कुछ सामान्य सिद्धान्त निर्धारित कर लिए गये थे।

इस इतिहास का स्थूल ढाँचा आचार्य शुक्ल द्वारा रचित हिन्दी साहित्य का इतिहास पर ही आधृत है, अतः मूल ढाँचे के गुण-दोषों का इसमें व्याप्त रहना अस्वाभाविक नहीं माना जा सकता। इस ग्रंथ की योजना हिन्दी साहित्य की इधर-उधर बिखरी हुई सामग्री को एक स्थान पर एकत्र कर उसे शृंखलाबद्ध कर देने हेतु की गई है। अपने विशाल आकार के कारण यह ग्रंथ पाठकों एवं जिज्ञासुओं के लिए अधिक सुविधाजनक तो नहीं है, किन्तु एक संदर्भ ग्रंथ के रूप में इसकी उपयोगिता निर्विवाद रूप से स्वीकार की गई है।

इस संबंध में अनेक शोध प्रबंध और रचनाऐं भी प्रस्तुत की गई हैं, जो अनेक विवादास्पद प्रश्नों एवं समस्याओं का समाधान करने में सहायक हुई हैं, इनमें से कुछ प्रमुख ग्रंथ एवं उनके रचयिताओं के विवरण निम्न हैं:—

1. हिन्दी साहित्य – डॉ० धीरेन्द्र वर्मा
2. हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास – डॉ भगीरथ मिश्र
3. राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा – मोतीलाल मेनारिया
4. हिन्दी वीर काव्य – डॉ० टीकम सिंह तोमर
5. रीतिकाल की भूमिका – डॉ० नगेन्द्र
6. आधुनिक हिन्दी साहित्य – डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
7. आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास – डॉ० कृष्णलाल
8. साहित्य का इतिहास दर्शन – डॉ० नलिन विलोचन शर्मा
9. खड़ीबोली हिन्दी साहित्य का इतिहास – ब्रजरत्नदास
10. चैतन्य सम्प्रदाय और उसका साहित्य – प्रभुदयाल मीतल

आज इस बात की आवश्यकता है कि इन शोध-ग्रन्थों से प्राप्त निष्कर्षों का उपयोग करते हुए नये सिरे से हिन्दी साहित्य के इतिहास की रूपरेखा प्रस्तुत की जाये।

(9) डॉ० गणपति चन्द्र गुप्त :

डॉ० गणपति चन्द्र गुप्त का हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परम्परा में महत्वपूर्ण योगदान है, इन्होंने 'हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास' लिखकर एक अभाव की पूर्ति की है इस ग्रंथ में साहित्येतिहास के विकासवादी सिद्धान्तों की प्रतिष्ठा करते हुए उसके आलोक में हिन्दी साहित्य की नूतन व्याख्या प्रस्तुत की गई है। लेखक के अनुसार– "विगत तीस-पैंतीस वर्षों में हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में पर्याप्त अनुसंधान कार्य हुआ है, जिनसे बहुत सी ऐसी नयी सामग्री, नये तथ्य और नए निष्कर्ष प्रकाश में आए हैं जो आचार्य शुक्ल के

वर्गीकरण-विश्लेषण आदि के सर्वथा प्रतिकूल पड़ते हैं।

डॉ० गुप्त ने इसी पद्धति का अनुसरण करते हुए शुक्ल जी के काल विभाजन को स्वीकार नहीं किया तथा हिन्दी साहित्य के इतिहास को तीन काल-खण्डों – प्रारम्भिक काल, मध्यकाल एवं आधुनिक काल में विभक्त किया। प्रारम्भिक काल एवं मध्यकाल के अन्तर्गत वे तीन-तीन प्रकार के काव्यों की रचना को स्वीकार करते हैं। —

(अ) धर्माश्रित काव्य
(ब) लोकाश्रित काव्य
(स) राज्याश्रित काव्य

धर्माश्रित काव्य के अन्तर्गत वे पाँच काव्य परम्पराओं का अस्तित्व स्वीकार करते हैं—

(i) धार्मिक रास-काव्य परम्परा
(ii) संत काव्य परम्परा
(iii) पौराणिक गीति परम्परा
(iv) पौराणिक प्रबंध परम्परा
(v) रसिक भक्ति परम्परा

राज्याश्रित काव्य के अन्तर्गत वे पाँच काव्य परम्पराओं का अस्तित्व स्वीकार करते हैं—

(i) मैथिली गीति परम्परा
(ii) ऐतिहासिक रास परम्परा
(iii) ऐतिहासिक चरित-काव्य परम्परा
(iv) ऐतिहासिक मुक्तक परम्परा
(v) शास्त्रीय परम्परा

लोकाश्रित काव्य के अंतर्गत वे केवल दो काव्य-परम्पराओं के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं—

(i) रोमांसिक कथा काव्य परम्परा
(ii) स्वच्छंद प्रेम काव्य परम्परा

आधुनिक काल का विकास वे स्वतंत्र रूप से हुआ मानते हैं। अतः उसमें इस प्रकार की काव्य

परम्पराओं का समावेश नहीं है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की जिस परम्परा का सूत्रपात गार्सा-द-तासी से हुआ था, वह अब तक पुनर्जीवित है। विद्वानों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से जिन इतिहास-ग्रंथों की रचना की है, वे हिन्दी साहित्य के इतिहास के विविध पक्षों को प्रकाश में लाने हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं। आशा है यह परम्परा अभी और आगे विकसित होगी तथा हिन्दी साहित्य की नवीन सामग्री को प्रकाश में लाकर अध्येताओं के समक्ष हिन्दी के समृद्ध वाङ्मय को प्रस्तुत करेगी।

अभ्यासार्थ प्रश्नावली

1. हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की परम्परा पर प्रकाश डालते हुए उसमें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के योगदान की चर्चा कीजिए।
2. हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखकों में आप किन लेखकों को महत्वपूर्ण मानते हैं और क्यों? कारण सहित उत्तर दीजिए।
3. हिन्दी साहित्य के इतिहास का प्रथम लेखक कौन है? हिन्दी साहित्य के प्रमुख इतिहास-ग्रन्थों पर संक्षिप्त प्रकाश डालते हुए यह बताइये कि आप किस इतिहास-ग्रन्थ को सर्वश्रेष्ठ मानने के पक्ष में हैं? अपने कथन के समर्थन में तर्क प्रस्तुत कीजिए।

पता-
डॉ० समदर्शी कुमार
विभाग - हिन्दी
मोबाइल न० - 7909046087
दिनांक - 01.02.2023
SRAP College (B.R.A.B.U.M)